© 2011 IJSRST | Volume 1 | Issue 1 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

# भारत में पर्यावरण आन्दोलन का विकास पर प्रभाव

अखिलेश कुमार मिश्र
शोध छात्र (लोक प्रशासन विभाग)
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्राकृतिक पर्यावरण की रचना भौतिक या अजैविक संघटकों (स्थल, जल, मृदा, तथा वायु) एवं जैविक संघटकों (पौधे, मानव सहित जन्तु तथा सूक्ष्म जीव) द्वारा होती है। ये भौतिक तथा जैविक प्रक्रम इस तरह कार्य करते हैं, कि यदि भौतिक पर्यावरण के किसी क्षेत्र में किसी संघटक या संघटकों में किसी खास समय में कोई परिवर्तन होता है तो उसकी अन्य परिवर्तनों द्वारा भरपाई हो जाती है स्पष्ट है, कि पर्यावरण तंत्र में अन्तः निर्मित स्वतः नियामक क्रियाविधि होती है, जिसके तहत यदि पर्यावरण में कोई परिवर्तन होता है तो दूसरे प्रकार के परिवर्तन द्वारा घटित परिवर्तन की क्षतिपूर्ति हो जाती है। इस तरह की स्वतः नियंत्रित होने वाली क्रियाविधि को समस्थैतिक क्रियाविधि ;भ्वउमवेजंजपब डमबींदपेउद्ध कहते है। इसी क्रियाविधि के कारण प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र या पर्यावरण तंत्र में संतुलन बना रहता है।

पर्यावरण सम्पूर्ण मानवता के जीवन का आधार है। यह पेड़, पौधों जीवों को जीवन देता है और जीने योग्य वातावरण के साथ–साथ आवश्यक मूलभूत जरूरतों जैसे–रोटी, कपड़ा, मकान, कच्चा माल आदि उपलब्ध कराता है आज की वैज्ञानिक प्रगति, प्रौद्योगिकी उन्नति, अनुवंशिकी, कृषि, उद्योग आदि की उपलब्धता प्रकृति से ही सम्भव हो पायीं है। किन्तु प्रकृति के अप्राकृतिक दोहन ने इसके अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह खड़ा कर दिया है। यह सर्वविदित है कि जैव विविधता के उचित संरक्षण के लिए स्वच्छ पर्यावरण का होना आवश्यक है। किन्तु दिन–प्रतिदिन बढ़ते प्रदूषण के चलते कई प्राकृतिक जैव वनस्पतियों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है।

पर्यावरण मानव की सुरक्षा से भी जुड़ा हुआ है। संसाधनों के दोहन में सबसे बड़ी भागीदारी मनुष्य की हो रही है। अधिकाधिक भौतिक साधन प्राप्ति की प्रत्याशा में प्राकृतिक तौर पर उपलब्ध संसाधनों का मनमाना दोहन किया गया। जिसके परिणामस्वरूप सूखा, बाढ़, महामारी, भूकम्प, भूस्खलन, ओजोन परत का नष्ट होना, ग्लोबल वार्मिग, अकाल जैसी प्राकृतिक आपदायें नित्य विकराल रूप धारण करती जा रही हैं। इस प्रकार उपभोक्तावादी संस्कृति पर्यावरण संकट का मूल कारण है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण में पर्यावरण से अभिप्राय इस सरल तथ्य से है। कि सम्पूर्ण विश्व एक अन्तर्सम्बन्धित व्यवस्था है जिसमें जीव–जन्तु तथा उनका प्राकृतिक निवास और हवा पानी मिट्टी आदि सभी कुछ निहित है। मानव जाति इस जटिल तथा अन्तर्सम्बन्धित प्राकृतिक विश्व का एक भाग है। औद्योगिक प्रदूषण के रूप में आज जो हम

बोयेगें, वही कल वायुमण्डल की अस्थिता के रूप में काटेगें। आरम्भ में ही पर्यावरण वैज्ञानिक अनुभववाद से अत्यधिक प्रभावित रहा है। जिसका उद्देश्य, जीव जन्तुओं तथा पेड़ पौधों का परस्पर सम्बन्ध तथा उनके प्रकृतिवास का अध्ययन करना रहा है। नैतिक राजनैतिक, आर्थिक अथवा विकास के सन्दर्भ में इस शब्दावली का प्रयोग अपेक्षाकृत आधुनिक है।

विकास की संकल्पना मुख्यतः द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद नवोदित देशों के मार्गदर्शन के उद्देश्य से विकसित की गई इन देशों को सामूहिक रूप से विकासशील देश कहा जाता है वैसे विकास का विचार एकदम नया नहीं है। इसके आरम्भिक संकेत उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान और बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध के अनेक सिद्धान्तों में मिलते हैं फ्रांसीसी दार्शनिक ऑगस्त काम्टे ने यह सिद्धांत रखा था कि ज्ञान विज्ञान की उन्नति के फलस्वरूप हमारा सामाजिक सम्बन्ध स्थिर स्थिति से अनुबंध की ओर अग्रसर होते है। उधर जर्मन समाज वैज्ञानिक फडीनेड टानीज ने यह सिद्धान्त रखा कि मानव समाज का संगठन बद्धसमाज से संघ समाज की ओर अग्रसर होता है। फिर फ्रांसीसी समाज वैज्ञानिक एमीलदुर्खीम ने यह मान्यता रखी कि मानव समाज यांत्रिक संहति से आंगिक संहति की ओर अग्रसर होता है। जर्मन समाज वैज्ञानिक मैक्स वैथर ने भिन्न भिन्न प्रकार की सत्ता का विश्लेषण करने के बाद यह संकेत दिया कि समाज परंपरागंत सनत। से कानूनी सत्ता तर्कसंकट सत्ता की ओर अग्रसर होता है।

अतः विकास का अभिप्राय प्रगति की दिशा में अग्रसर होना। जे0एच0 मिटलमैन ने (आउट फ्रॉम अंडर डिवेलपमेंट : प्रास्प्रेक्प्स फार द थर्ड वर्ल्ड) अल्पविकास से बाहर : तीसरी दुनिया का भविष्य के अन्तर्गत यह लिखा है कि विकास का अर्थ सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिये प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों के तर्कसंगत प्रयोग की क्षमता को बढ़ाना है।

मुख्य रूप से विकास पर ध्यान देने की शुरूआत 1960 और 1970 के पर्यावरण आन्दोलनों से हुआ है। कुछ लेखकों की रचनाओं ने (जिसमें रैचल कारसन की ैपसमदज`चतपदह) (1960) पाल ऐरलिन्व की जेम च्वचनसंजपवद ठवउइ ;1968द्ध तथा गैरट हाडडीन की ज्तंहमकल व िजीम बवउउवदे (1968) का नाम लिया जा सकता है। केवल पर्यावरण का डर नही खड़ा किया बल्कि इसे बढ़ती हुई जनसंख्या से भी सम्बन्धित किया। कुछ अन्य लेखक पर्यावरण के सैद्धान्तिक विकास में अमरीका के कार्टर प्रशासन की ळसवइंस 2000 त्मचवतज संयुक्त राष्ट्र संघ की व्दसल वदम म्ंतजी त्मचवतज कल्ब ऑफ रोम की जेम सपउपज व िळतवूजी ;1972द्ध इकोलोजिस्ट पंत्रिका का विशेष अंक ठसनम च्तपदज व िनतअपअंस तथा ब्रन्टलैण्ड की व्नत बवउउवद निजनतम त्मचवतज ;1987द्ध काफी महत्वपूर्ण मानी जाती है। इन सभी रिपोर्टो और पत्रिकाओं का एक ही सामान्य विषय था इन्होंने पर्यावरण की बड़े पैमाने पर होने वाली बर्बादी को लेकर गहरी चिन्ता प्रकट की। 1970 के बाद यूरोप के कई देशों में हरित राजनीतिक आन्दोलन की स्थापना होनी शुरू हो गई। परिणामस्वरूप पर्यावरण आन्दोलन और औद्योगिक विकास से उत्पन्न होने वाली प्रदूषण की समस्या पिछले दो दशकों में राजनीतिक सिद्धान्त का अभिन्न अंग बन गई हैं

पर्यावरण का राजनीतिक समावेश एक तरफ तो हमारे लिये सुखदायक भी है क्योंकि इस क्षेत्र में राजनीतिक पहल हो जाने से यह जन जागरूकता का विषय बना। पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के स्टाक होम सम्मेलन में पर्यावरण का जिक्र हमारे लिए आज नील का पत्थर साबित हुआ। आज थोड़ी बहुत भी जो पर्यावरणीय संचेतना से संबधित जो राजनीतिक सम्मेलन की प्रेरणा अवश्य शामिल होती है। दूसरी तरफ हमारे कुछ पर्यावरणविदों,

समाजसेवी संस्थाओं तथा चिंतकों ने इस विषय में संरक्षणात्मक भूमिका निभाने के लिए सरकार की योजनाओं का विरोध करके इसमें जनता की भागीदारी सुनिश्चित की। यह सरकार के उन कार्यों का परिणाम है जो सरकार तथा राजनेताओं द्वारा महज अपने राजनीतिक तथा आर्थिक लाभ का ध्यान में रखकर किये जा रहे हैं उन कार्यों में पर्यावरण की स्वच्छता को उनके द्वारा बिल्कुल भी अनदेशा किया जा रहा है। इसी के विरोध स्वरूप हमारे यहां चलाये गये विभिन्न पर्यावरण संरक्षण आंदोलन जैसे–

**चिपको आन्दोलन :–** उत्तरांचल के चमोली स्थान से आरम्भ हुआ। यह वन बचाओं आन्दोलन हिमालय का वन संरक्षण के लिए एक अशिक्षित महिला 'श्रीमती गौर देवी' द्वारा शुरू किया गया। लेकिन सुन्दर लाल बहुगुणा व चण्डी प्रसाद भरत ने इसे राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय मंच प्रदान किया। इस कारण सुन्दर लाल बहुगुणा इस आन्दोलन के पर्याय माने जाते हैं।

**रूख भाइला आन्दोलन :–** राजस्थान के बांसवाड़ा जिले में वन संरक्षण के लिए यह आन्दोलन श्रीमती लाड़की नामक आदिवासी महिला द्वारा चलाया गया।

**एप्पिको आन्दोलन :–** यह दक्षिण भारत का चिपको आन्दोलन है। इसके जनक व प्रणेता श्री पांडुरंग हेगड़े हैं। इस आन्दोलन का नारा है– 'उलिसु, बेलेसु, मन्तु, बलिस' अर्थात् बचाओं, बढ़ाओं और काम में लाओं। आन्दोलन में पेड़ और मानव के जैविक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक रिश्तों के साथ आर्थिक रिश्तों पर भी जोर दिया जाता है।

**मैत्री आन्दोलन :–** उत्तरांचल में पहाड़ों के वृक्षहीन होते जाने को देखकर सन् 1995 में कल्याण सिंह रावत ने पहाड़ों को पुनः हराभरा करने के लिए यह आन्दोलन चलाया। इस आन्दोलन में पौधों की पौध कुमारी कन्याएँ तैयार करती हैं तथा विवाह की तिथि के दिन वह पौधे किसी निर्धारित वन क्षेत्र में स्मृति के रूप में रोपित कर दी जाती है।

**पश्चिमी घाट बचाओ आन्दोलन :–** पश्चिमी घाट (महाराष्ट्र) में यह आन्दोलन गोवा की पीपुल्स पार्टी द्वारा आरम्भ किया गया। महाराष्ट्र सरकार की छद्म पर्यावरण नीति के विरोध में इसका आरम्भ किया गया।

**तिलाड़ी का आन्दोलन :–** उत्तर काशी के तिलाड़ी नामक स्थान पर सन् 1930 से यह आन्दोलन चलाया जा रहा है। इसका उद्देश्य वनों की सुरक्षा तथा ग्रामवसियों के वन सम्बन्धीं अधिकारों को वापस दिलाना है आदि का पर्यावरण संरक्षण के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है।

इन्हीं के अथक प्रयासों के कारण आज प्रशासन में भी थोड़ी बहुत पर्यावरणीय चिंता उत्पन्न हुई है। हमारे देश में नही वरन् विदेशों मे भी इसकी राजनीतिक घुसपैठ बहुत अधिक है। कुछ समय पूर्व इंग्लैण्ड में ग्रीन दल ने पर्यावरण को अपना चुनावी मुद्दा बनाकर चुनाव लड़ा तो उनकी भारी विजय हुई। जनता के चुनावी निर्णय ने यह स्पष्ट साबित कर दिया कि जा दल उन्हें स्वच्छ पर्यावरण देने में समर्थ है वही शासन करने लायक है। आज विभिन्न देशों और स्थानों के चुनावों में भी इस विषय की महत्ता स्पष्ट दिखायी देती है। यहां पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि पर्यावरण की राजनीति तभी सफल हुई है जब इनमें जनहित और जनभावनाएं शमिल हुई है। अतः भावी समय के लिए इतिहास के निर्णयों के आधार पर यह आवश्यक है कि किसी भी पर्यावरण संबधी आंदोलन में जन समर्थन जितना अधिक होगा, वह उतना ही सफल होगा। क्योंकि आज जो भी अपनी दैनिक समस्याओं की मुक्ति से ऊपर उठ कर थोड़ा बहुत भी सोचता है उसमें पर्यावरण संरक्षण अवश्य शामिल रहता है। पर्यावरण संरक्षण

का एक ठोस आधार वन्य जीवों की सलामती भी है। वन्य जीवों के विनाश का फल हमें कई वनस्पति, वृक्ष प्रजातियों के उन्मूलन के रूप में भी सहना पड़ रहा है। लुप्त होते डोडे, माओ, डालफिन, गिद्ध आदि इसके मुख्य उदाहरण है। इसके अतिरिक्त काले हिरण, सांभर, बाघ, चीता, जैसे कई महत्वपूर्ण जानवर भी शिकारियों का निशाना बनकर लुप्त हो रहे है। यह प्रकृति का नियम है कि कोई भी प्रक्रिया अपने अस्तित्व क लिए पूर्णतया आत्मनिर्भर न होकर कई चीजों पर निर्भर होती है। इन्हीं सब परिस्थितियों को देखकर भावी समय के लिए इनका अस्तित्व बनायें रखने के लिए हमारे देश में सर्वाधिक प्रयास श्रीमती मेनका गांधी, उमाभारती, मेधापाटेकर, गौरा देवी, सुनीता नारायण, प्रसिद्ध समाजसेवी एवं गांधीवादी पर्यावरणविद् अभिषेक मिश्रा, राजेन्द्र प्रसाद, राधा बहन, सुचेता पोईन्दी आदि की तरफ से किया जा रहा है। बड़े–बड़े जानवरों के अतिरिक्त छोटे–मोटे कीटपतंगों का भी भूमि तथा अन्य प्रकार की प्राकृतिक संपदाओं में बहुत योगदान है। आज भूमि में उर्वराशक्ति की कुछ कमी के कारण केचुंए, इल्लिया, तथा इसी प्रकार के कीटों की कमी होना भी है। इसी तरह झीलों में जल प्रदूषण तत्वों के अतिरिक्त उसके लिए लाभकारी जन्तुओं तथा वनस्पतियों की विनाशिता भी जिम्मेदार है।

इसी तरह बढ़ता तापमान, जो कि हमारे पर्यावरण के लिए विभिन्न समस्याओं का कारण है, भी प्राकृतिक तत्वों से छेड़छाड़ के कारण ही हो रहा है। बढ़ते हुए तापमान का दुष्प्रभाव हमें कई प्रकार से झेलना पड़ता है। विभिन्न ग्लेशियरों के पिघलने से नदियों का बढ़ता जलस्तर ही हमारे लिए बाढ़ के रूप में आता है और इसी प्रकार सूखापन भी बहुत हद तक इन जलस्रोतों के असंतुलन के कारण ही उपजा है। प्रकृति की इस अनुठी व्यवस्था में वायु प्रदूषण के हस्तक्षेप से ही हिमटोप पिघलकर बाढ़ की तबाही को जन्म देते है। औद्योगिकीकरण की अधिकता से वायुमण्डल की संरक्षक ओजोन परत में छिद्र होने के प्रमाण हमें मिले है। यह आवश्यक है कि हम समय रहते इन प्रदूषणों से निपटने के लिए ठोस और कारगर उपाय अपनाएं जिसके लिए हमारे देश में आज जगह–जगह पर आन्दोलनकारियों द्वारा आन्दोलन चलाये जा रहे है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची


1. डॉ0 के0सी0 पुरोहित, पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी।
2. डॉ0 राजेन्द्र बलोदी, उत्तराखण्ड : समग्र ज्ञान कोष, 2008.
3. डॉ0 एस0के0 ओझा, उत्तर प्रदेश एक समग्र अध्ययन, 2009.
4. प्रो0 सविन्द्र सिंह, पर्यावरण भूगोल, (इलाहाबाद)।
5. डॉ0 एस0डी0 मौर्य, संसाधन एवं पर्यावरण, 2006 (इलाहाबाद)।
6. डॉ0 पुष्पेश पन्त, पर्यावरण 2009, (नई दिल्ली)।
7. डॉ0 राजेन्द्र बलोदी, उत्तराखण्ड : समग्र ज्ञान कोष, 2008.
8. प्रो0 जी पालनी थूराय, विकास की गॉधीवादी अवधारणा, वर्ल्ड फोकस 2011.
9. बी0वी0 धर, माईनिंग एण्ड एनवॉयरमेन्ट।